CHAPTER इकतालीस
कृष्ण तथा बलराम का मथुरा में प्रवेश

इस अध्याय में बतलाया गया है कि किस तरह भगवान् कृष्ण ने मथुरा नगरी में प्रवेश किया, धोबी को मारा और किस तरह एक जुलाहे तथा सुदामा नामक माली को वर दिए।

यमुना के जल में अक्रूर को अपना विष्णुरूप प्रदर्शित करने तथा अक्रूर की स्तुतियाँ स्वीकार करने के बाद भगवान् कृष्ण ने अपना वह दृश्य छिपा लिया ठीक वैसे ही जैसे कोई रंगकर्मी अपने नाटक का पटाक्षेप करता है। अक्रूर जल से निकल कर बाहर आये और अत्यन्त आश्चर्यचकित होकर भगवान् के पास गये तो उन्होंने पूछा कि क्या उन्हें स्नान करते समय कोई अद्‌भुत वस्तु दिखी। इस पर अक्रूर ने कहा, ''जल, स्थल या आकाश लोकों में जितनी भी अद्‌भुत वस्तुएँ हैं उन सबका अस्तित्व आप में है। अत: जब किसी ने आपको देख लिया तो फिर देखने को बचा ही क्या?'' इसके बाद अक्रूर फिर से रथ हाँकने लगे।

कृष्ण, बलराम तथा अक्रूर दिन ढले मथुरा पहुँचे। नन्द महाराज तथा अन्य ग्वाले पहले ही वहाँ पहुँच चुके थे। उनसे मिलने के बाद कृष्ण ने अक्रूर से घर लौट जाने के लिए कहा और यह वादा किया कि वे कंस का वध करने के बाद उनसे वहाँ मिलेंगे। अक्रूर ने दुखित होकर कृष्ण से विदा ली और कंस के पास यह बतलाने गये कि कृष्ण तथा बलराम मथुरा आ गये हैं। इसके बाद वे अपने घर चले गये।

कृष्ण तथा बलराम ग्वालबालों को अपने संग लेकर भव्य नगरी देखने गये। जब उन्होंने मथुरा में प्रवेश किया, तो नगरी की सारी स्त्रियाँ कृष्ण को देखने के लिए अपने अपने घरों से उत्सुकता से बाहर निकल आईं। वे उनके विषय में अक्सर सुना करती थीं और दीर्घकाल से उनके प्रति प्रगाढ़ आकर्षण उत्पन्न कर चुकी थीं। किन्तु अब जबकि वे उन्हें सचमुच देख रही थीं वे सुख से भावविभोर हो गईं और कृष्ण की अनुपस्थिति से उत्पन्न उनके सारे कष्ट समूल नष्ट हो गये।

तत्पश्चात् कृष्ण तथा बलराम कंस के दुष्ट धोबी के पास आये। कृष्ण ने उससे लिए जा रहे कुछ उत्तम वस्त्र माँगे किन्तु उसने देने से न केवल इनकार किया अपितु दोनों विभूतियों का अपमान भी किया। इससे कृष्ण अत्यधिक क्रुद्ध हो उठे और अपनी अँगुली के अग्रभाग से उसका सिर काट लिया। उसका असामयिक अन्त देखकर धोबी के नौकर अपना कपड़ों का गट्ठर वहीं छोड़कर विभिन्न दिशाओं

में भाग गये। इसके बाद कृष्ण तथा बलराम ने उनमें से अपनी पसन्द के कुछ वस्त्र ले लिये।

इसके बाद एक जुलाहा उन दोनों विभूतियों के पास पहुँचा जिसने उन्हें खूब सँवार दिया जिसके एवज में कृष्ण ने उसे इस जन्म में ऐश्वर्य प्रदान किया और अगले जन्म में मोक्ष। तब दोनों भाई सुदामा नामक माली के घर गये। सुदामा ने उन्हें नमस्कार किया, उनके पाँव धोकर उनकी पूजा की, अर्घ्य प्रदान किया, चंदन का लेप लगाया और उनके सम्मान में स्तुति गाई। तत्पश्चात् उसने उन्हें सुगन्धित फूलों की मालाओं से सजाया-सँवारा। दोनों ने प्रसन्न होकर उसे मुँहमाँगे वर दिए और फिर आगे निकल गये।

श्रीशुक उवाच
स्तुवतस्तस्य भगवान्दर्शयित्वा जले वपुः ।
भूयः समाहरत्कृष्णो नटो नाट्यमिवात्मनः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; स्तुवतः—स्तुति करते समय; तस्य—अक्रूर का; भगवान्—भगवान् ने; दर्शयित्वा—दिखलाने के बाद; जले—जल में; वपुः—अपना साकार रूप; भूयः—फिर; समाहरत्—छिपा लिया; कृष्णः—श्रीकृष्ण ने; नटः—अभिनेता; नाट्यम्—नाटक, प्रदर्शन; इव—सदृश; आत्मनः—अपना।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : अभी अक्रूर स्तुति कर ही रहे थे कि भगवान् कृष्ण ने अपना वह रूप जिसे उन्होंने जल के भीतर प्रकट किया था, उसी तरह छिपा लिया जिस तरह कोई नट अपना खेल समाप्त कर देता है।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण ने अक्रूर की आँखों के सामने से विष्णुरूप के साथ साथ स्वर्ग तथा वहाँ के नित्य वासियों के दृश्य को छिपा लिया।

सोऽपि चान्तर्हितं वीक्ष्य जलादुन्मज्य सत्वरः ।
कृत्वा चावश्यकं सर्वं विस्मितो रथमागमत् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, अक्रूर; अपि—निस्सन्देह; च—तथा; अन्तर्हितम्—अप्रकट हुआ; वीक्ष्य—देखकर; जलात्—जल से; उन्मज्य—निकल कर; सत्वरः—तुरन्त; कृत्वा—पूरा करके; च—तथा; आवश्यकम्—नियतकर्म; सर्वम्—समस्त; विस्मितः—चकित; रथम्—रथ के पास; आगमत्—गया।

जब अक्रूर ने उस दृश्य को अन्तर्धान होते देखा तो वे जल के बाहर आ गये और उन्होंने जल्दी जल्दी अपने विविध अनुष्ठान-कर्म सम्पन्न किये। तत्पश्चात् वे विस्मित होकर अपने रथ पर लौट आये।

तमपृच्छद्धृषीकेशः किं ते दृष्टमिवाद्भुतम् ।
भूमौ वियति तोये वा तथा त्वां लक्षयामहे ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

तम्—उससे; अपृच्छत्—पूछा; हृषीक्शः—कृष्ण ने; किम्—क्या; ते—तुम्हारे द्वारा; दृष्टम्—देखा गया; इव—निस्सन्देह; अद्भुतम्—कुछ असाधारण; भूमौ—पृथ्वी पर; वियति—आकाश में; तोये—जल में; व—अथवा; तथा—उसी तरह; त्वाम्—तुमको; लक्षयामहे—हम अटकल लगाते हैं।

भगवान् कृष्ण ने अक्रूर से पूछा: क्या आपने पृथ्वी पर, या आकाश में या जल में कोई अद्भुत वस्तु देखी है? आपकी सूरत से हमें लगता है कि आपने देखी है।

श्रीअक्रूर उवाच
अद्भुतानीह यावन्ति भूमौ वियति वा जले ।
त्वयि विश्वात्मके तानि किं मेऽदृष्टं विपश्यतः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

श्री-अक्रूरः उवाच—श्री अक्रूर ने कहा; अद्भुतानि—अद्भुत वस्तुएँ; इह—इस लोक में; यावन्ति—जितनी भी; भूमौ—पृथ्वी पर; वियति—आकाश में; वा—अथवा; जले—जल में; त्वयि—तुम में; विश्व-आत्मके—हरवस्तु से युक्त; तानि—वे; किम्—क्या; मे—मेरे द्वारा; अदृष्टम्—नहीं देखा गया; विपश्यतः—आपको देखकर।

श्री अक्रूर ने कहा : पृथ्वी, आकाश या जल में जो भी अद्भुत वस्तुएँ हैं, वे सभी आपमें विद्यमान हैं। चूँकि आप हर वस्तु से ओतप्रोत हैं अतः जब मैं आपका दर्शन कर रहा हूँ तो फिर वह कौन सी वस्तु है, जिसे मैंने नहीं देखा है?

यत्राद्भुतानि सर्वाणि भूमौ वियति वा जले ।
तं त्वानुपश्यतो ब्रह्मन्किं मे दृष्टमिहाद्भुतम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

यत्र—जिसमें; अद्भुतानि—अद्भुत वस्तुएँ; सर्वाणि—समस्त; भूमौ—पृथ्वी पर; वियति—आकाश में; वा—अथवा; जले—जल में; तम्—उस; त्वा—तुमको; अनुपश्यतः—देखते हुए; ब्रह्मन्—हे परम सत्य; किम्—क्या; मे—मेरे द्वारा; दृष्टम्—देखा गया; इह—इस संसार में; अद्भुतम्—आश्चर्यजनक।

और अब जबकि हे परम सत्य, मैं आपको देख रहा हूँ जिनमें पृथ्वी, आकाश तथा जल की सारी अद्भुत वस्तुएँ निवास करती हैं, तो फिर भला मैं इस जगत में और कौन सी अद्भुत् वस्तुएँ देख सकता था?

तात्पर्य : अब अक्रूर को बोध हुआ कि कृष्ण उनके भतीजे मात्र नहीं हैं।

इत्युक्त्वा चोदयामास स्यन्दनं गान्दिनीसुतः ।
मथुरामनयद्रामं कृष्णं चैव दिनात्यये ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; उक्त्वा—कहकर; चोदयाम् आस—आगे हाँका; स्यन्दनम्—रथ को; गान्दिनी-सुतः—गान्दिनी पुत्र, अक्रूर ने; मथुराम्—मथुरा में; अनयत्—ले आया; रामम्—बलराम को; कृष्णम्—कृष्ण को; च—तथा; एव—भी; दिन—दिन के; अत्यये—समाप्त होते।.

इन शब्दों के साथ गान्दिनीपुत्र अक्रूर ने रथ आगे हाँकना शुरू कर दिया। दिन ढलते ढलते वे भगवान् बलराम तथा भगवान् कृष्ण को लेकर मथुरा जा पहुँचे।

मार्गे ग्रामजना राजंस्तत्र तत्रोपसङ्गताः ।
वसुदेवसुतौ वीक्ष्य प्रीता दृष्टिं न चाददुः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

मार्गे—रास्ते में; ग्राम—गाँवों के; जनाः—लोग; राजन्—हे राजा (परीक्षित); तत्र तत्र—जहाँ तहाँ; उपसङ्गताः—पास आकर; वसुदेव-सुतौ—वसुदेव के दोनों पुत्रों को; वीक्ष्य—देखकर; प्रीताः—प्रसन्न; दृष्टिम्—दृष्टि; न—नहीं; च—तथा; आददुः—हटा पाते।.

हे राजन्, वे मार्ग में जहाँ जहाँ से गुजरते, गाँव के लोग पास आकर वसुदेव के इन दोनों पुत्रों को बड़े ही हर्ष से निहारते। वस्तुतः ग्रामीणजन उनसे अपनी दृष्टि हटा नहीं पाते थे।

तावद्व्रजौकसस्तत्र नन्दगोपादयोऽग्रतः ।
पुरोपवनमासाद्य प्रतीक्षन्तोऽवतस्थिरे ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

तावत्—तब तक; व्रज-ओकसः—ब्रजवासी; तत्र—वहाँ; नन्द-गोप-आदयः—ग्वालों के राजा नन्द इत्यादि; अग्रतः—आगे आगे; पुर—नगर के; उपवनम्—उद्यान में; आसाद्य—आकर; प्रतीक्षन्तः—प्रतीक्षा में; अवतस्थिरे—रुके रहे।.

नन्द महाराज तथा वृन्दावन के अन्य वासी रथ से पहले ही मथुरा पहुँच गये थे और कृष्ण तथा बलराम की प्रतीक्षा करने के लिए नगर के बाहरी उद्यान में रुके हुए थे।

तात्पर्य : नन्द इत्यादि मथुरा पहले पहुँच चुके थे क्योंकि अक्रूर के स्नान के कारण कृष्ण तथा बलराम के रथ को देरी हो गई थी।

तान्समेत्याह भगवानक्रूरं जगदीश्वरः ।
गृहीत्वा पाणिना पाणिं प्रश्रितं प्रहसन्निव ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

तान्—उनके साथ; समेत्य—मिलकर; आह—कहा; भगवान्—भगवान् ने; अक्रूरम्—अक्रूर से; जगत्-ईश्वरः—ब्रह्माण्ड के स्वामी; गृहीत्वा—पकड़ कर; पाणिना—अपने हाथ से; पाणिम्—उसके हाथ को; प्रश्रितम्—विनीत; प्रहसन्—हँसते हुए; इव—सदृश।

नन्द तथा अन्य लोगों से मिलने के बाद ब्रह्माण्ड के नियन्ता भगवान् कृष्ण ने विनीत अक्रूर के हाथ को अपने हाथ में लेकर हँसते हुए इस प्रकार कहा।

भवान्प्रविशतामग्रे सहयानः पुरीं गृहम् ।
वयं त्विहावमुच्याथ ततो द्रक्ष्यामहे पुरीम् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

भवान्—आप; प्रविशताम्—प्रवेश करें; अग्रे—आगे; सह—साथ में; यानः—रथ में; पुरीम्—नगर में; गृहम्—तथा अपने घर में; वयम्—हम; तु—तो; इह—यहाँ; अवमुच्य—उतर कर; अथ—तब; ततः—तत्पश्चात्; द्रक्ष्यामहे—देखेंगे; पुरीम्—नगरी को।

[भगवान् कृष्ण ने कहा] आप रथ लेकर हमसे पहले नगरी में प्रवेश करें। तत्पश्चात् आप अपने घर जाँय। हम यहाँ पर कुछ समय तक ठहर कर बाद में नगरी देखने जायेंगे।

श्रीअक्रूर उवाच

नाहं भवद्भ्यां रहितः प्रवेक्ष्ये मथुरां प्रभो ।
त्यक्तुं नार्हसि मां नाथ भक्तं ते भक्तवत्सल ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

श्री-अक्रूरः उवाच—श्री अक्रूर ने कहा; न—नहीं; अहम्—मैं; भवद्भ्याम्—आप दोनों के; रहितः—बिना; प्रवेक्ष्ये—प्रवेश करूँगा; मथुराम्—मथुरा में; प्रभो—हे प्रभु; त्यक्तुम्—परित्याग करना; न अर्हसि—आपको नहीं चाहिए; माम्—मुझ; नाथ—हे नाथ; भक्तम्—भक्त को; ते—तुम्हारा; भक्त-वत्सल—अपने भक्तों पर पितृवत् स्नेह रखने वाले।

श्री अक्रूर ने कहा : हे प्रभु, मैं आप दोनों के बिना मथुरा में प्रवेश नहीं करूँगा। हे नाथ, मैं आपका भक्त हूँ अतः यह उचित नहीं होगा कि आप मेरा परित्याग कर दें क्योंकि आप अपने भक्तों के प्रति सदैव वत्सल रहते हैं।

आगच्छ याम गेहान्नः सनाथान्कुर्वधोक्षज ।
सहाग्रजः सगोपालैः सुहृद्भिश्च सुहृत्तम ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

आगच्छ—कृपया आइये; याम—चलें; गेहान्—घर; नः—हमारे; स—सहित; नाथान्—स्वामी; कुरु—कीजिये; अधोक्षज—हे दिव्य प्रभु; सह—साथ; अग्र-जः—अपने बड़े भाई; स-गोपालैः—ग्वालों के साथ; सुहृद्भिः—अपने मित्रों के साथ; च—तथा; सुहृत्-तम—हे परम शुभचिन्तक।

आइये, आप अपने बड़े भाई, ग्वालों तथा अपने संगियों समेत मेरे घर चलिये। हे मित्रश्रेष्ठ, हे दिव्य प्रभु, इस तरह कृपया मेरे घर को कृतार्थ कीजिये।

पुनीहि पादरजसा गृहान्नो गृहमेधिनाम् ।
यच्छौचेनानुतृप्यन्ति पितरः साग्नयः सुराः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

पुनीहि—पवित्र कीजिये; पाद—अपने पाँवों की; रजसा—धूल से; गृहान्—घर को; नः—हमारे; गृह-मेधिनाम्—जो गृहस्थों के द्वारा किये जाने वाले अनुष्ठानों में आसक्त हैं; यत्—जिससे; शौचेन—शुद्धि से; अनुतृप्यन्ति—तुष्ट हो जायेंगे; पितरः—मेरे पितृगण; स—सहित; अग्नयः—यज्ञ की अग्नियाँ; सुराः—तथा देवता।

मैं एक सामान्य गृहस्थ हूँ और विधिवत् यज्ञों का पालन करने वाला हूँ। अतः आप अपने चरणकमलों की धूलि से मेरे घर को पवित्र कीजिये। इस शुद्धि कर्म से मेरे पितर, यज्ञ-अग्नियाँ तथा सारे देवता तुष्ट हो जायेंगे।

अवनिज्याङ्घ्रियुगलमासीत्श्लोक्यो बलिर्महान् ।
ऐश्वर्यमतुलं लेभे गतिं चैकान्तिनां तु या ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

अवनिज्य—पखार करके; अङ्घ्रि-युगलम्—दोनों पाँव; आसीत्—बन गया; श्लोक्यः—यशस्वी; बलिः—राजा बलि; महान्—महान; ऐश्वर्यम्—शक्ति; अतुलम्—अनुपम; लेभे—प्राप्त किया; गतीम्—लक्ष्य; च—तथा; एकान्तिनाम्—भगवान् के अनन्य भक्तों के; तु—निस्सन्देह; या—जो।

आपके चरणों को पखार कर यशस्वी बलि महाराज ने न केवल यश तथा अनुपम शक्ति प्राप्त की अपितु शुद्धभक्तों की अन्तिम गति भी प्राप्त की।

आपस्तेऽङ्घ्रयवनेजन्यस्त्रींल्लोकान्शुचयोऽपुनन् ।
शिरसाधत्त याः शर्वः स्वर्याताः सगरात्मजाः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

आपः—जल (यथा गंगा नदी); ते—तुम्हारे; अङ्घ्रि—पाँवों के; अवनेजन्यः—पखारने से प्राप्त; त्रीन्—तीनों; लोकान्—लोकों को; शुचयः—नितान्त आध्यात्मिक होने से; अपुनन्—पवित्र बना दिया है; शिरसा—सिर पर; आधत्त—धारण कर लिया; याः—जिसे; शर्वः—शिव ने; स्वः—स्वर्ग को; याताः—गये; सगर-आत्मजाः—राजा सगर के पुत्र।

आपके चरणों के पखारने से दिव्य होकर गंगा नदी के जल ने तीनों लोकों को पवित्र बना दिया है। शिवजी ने उसी जल को अपने शिर पर धारण किया और उसी जल की कृपा से राजा सगर के पुत्र स्वर्ग गये।

देवदेव जगन्नाथ पुण्यश्रवणकीर्तन ।
यदूत्तमोत्तमःश्लोक नारायण नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

देव-देव—हे स्वामियों के स्वामी; जगत्-नाथ—हे ब्रह्माण्ड के स्वामी; पुण्य—पवित्र; श्रवण—सुनना; कीर्तन—तथा कीर्तन करना; यदु-उत्तम—यदुश्रेष्ठ; उत्तमः-श्लोक—उत्तम श्लोकों से स्तुति किये जाने वाले; नारायण—हे नारायण; नमः—नमस्कार; अस्तु—होवे; ते—आपको।

हे देवों के देव, हे जगन्नाथ, हे आप जिनके यश को सुनना और गायन करना अत्यन्त पवित्र है! हे यदुश्रेष्ठ, हे पुण्यश्लोक, हे परम भगवान् नारायण, मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

श्रीभगवनुवाच
आयास्ये भवतो गेहमहमर्यसमन्वितः ।
यदुचक्रद्रुहं हत्वा वितरिष्ये सुहृत्प्रियम् ॥ १७॥

शब्दार्थ

श्री-भगवान् उवाच—भगवान् ने कहा; आयास्ये—आऊँगा; भवतः—आपके; गेहम्—घर; अहम्—मैं; आर्य—अपने अग्रज (बलराम); समन्वितः—सहित; यदु-चक्र—यदुओं के चक्र (मंडल) के; द्रुहम्—शत्रु (कंस) को; हत्वा—मारकर; वितरिष्ये—प्रदान करूँगा; सुहृत्—अपने शुभचिन्तकों को; प्रियम्—सन्तोष।

परमेश्वर ने कहा : मैं अपने बड़े भाई के साथ आपके घर आऊँगा किन्तु पहले मुझे यदु जाति के शत्रु को मारकर अपने मित्रों तथा शुभचिन्तकों को तुष्ट करना है।

तात्पर्य : अक्रूर ने श्लोक १६ में कृष्ण की प्रशंसा *यदूत्तम* कहकर की है। यहाँ पर श्रीकृष्ण यह कहकर उसकी पुष्टि करते हैं ''चूँकि में यदुश्रेष्ठ हूँ अतः सर्वप्रथम मुझे यदुओं के शत्रु कंस को मारना चाहिए। तब मैं आपके घर आऊँगा।''

श्रीशुक उवाच
एवमुक्तो भगवता सोऽक्रूरो विमना इव ।
पुरीं प्रविष्टः कंसाय कर्मावेद्य गृहं ययौ ॥ १८॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एवम्—इस प्रकार; उक्तः—सम्बोधित करने पर; भगवता—भगवान् द्वारा; सः—उस; अक्रूरः—अक्रूर ने; विमनाः—निराश; इव—सदृश; पुरीम्—नगर मे; प्रविष्टः—प्रवेश किया; कंसाय—कंस को; कर्म—कार्यकलापों के विषय में; आवेद्य—सूचित करके; गृहम्—अपने घर; ययौ—चला गया।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : भगवान् द्वारा ऐसे सम्बोधित किये जाने पर अक्रूर भारी मन से नगर में प्रविष्ट हुए। उन्होंने राजा कंस को अपने ध्येय की सफलता से सूचित किया और तब वे अपने घर चले गये।

अथापराह्ण भगवान्कृष्णः सङ्कर्षणान्वितः ।

मथुरां प्राविशद्गोपैर्दिदृक्षुः परिवारितः ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

अथ—तब; अपर-अह्ने—तीसरे पहर, दोपहर के बाद; भगवान्—भगवान्; कृष्णः—कृष्ण ने; सङ्कर्षण-अन्वितः—बलराम सहित; मथुराम्—मथुरा में; प्राविशत्—प्रवेश किया; गोपैः—ग्वालबालों द्वारा; दिदृक्षुः—देखने की इच्छा वाले; परिवारितः—घिरे हुए।

भगवान् कृष्ण मथुरा देखना चाहते थे अतः संध्या समय अपने साथ बलराम तथा ग्वालबालों को लेकर उन्होंने नगर में प्रवेश किया।

ददर्श तां स्फाटिकतुङ्गगोपुर-
द्वारां बृहद्धेमकपाटतोरणाम् ।
ताम्रारकोष्ठां परिखादुरासदा-
मुद्यानरम्योपवनोपशोभिताम् ॥ २० ॥
सौवर्णशृङ्गाटकहर्म्यनिष्कुटैः
श्रेणीसभाभिर्भवनैरुपस्कृताम् ।
वैदूर्यवज्रामलनीलविद्रुमै-
र्मुक्ताहरिद्भिर्वलभीषु वेदिषु ॥ २१ ॥
जुष्टेषु जालामुखरन्ध्रकुट्टिमे-
ष्वाविष्टपारावतबर्हिनादिताम् ।
संसिक्तरथ्यापणमार्गचत्वरां
प्रकीर्णमाल्याङ्कुरलाजतण्डुलाम् ॥ २२ ॥
आपूर्णकुम्भैर्दधिचन्दनोक्षितैः
प्रसूनदीपावलिभिः सपल्लवैः ।
सवृन्दरम्भाक्रमुकैः सकेतुभिः
स्वलङ्कृतद्वारगृहां सपट्टिकैः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

ददर्श—देखा; ताम्—उस (नगरी) को; स्फाटिक—स्फटिक से बने; तुङ्ग—ऊँचा; गोपुर—मुख्य द्वार; द्वाराम्—घरों के दरवाजे; बृहत्—विशाल; हेम—स्वर्ण; कपाट—किंवाड़; तोरणाम्—तथा सजावटी मेहराब; ताम्र—ताँबे; आर—तथा पीतल के; कोष्ठाम्—भंडारघर; परिखा—खाइयों समेत; दुरासदाम्—दुर्लंघ्य; उद्यान—सार्वजनिक बगीचे; रम्य—आकर्षक; उपवन—तथा उपवन; उपशोभिताम्—सजाये गये; सौवर्ण—सोना; शृङ्गाटक—चौराहे; हर्म्य—अन्तःपुर, महल; निष्कुटैः—तथा आराम उद्यानों से; श्रेणी—व्यापारियों के; सभाभिः—सभाभवनों से; भवनैः—तथा घरों से; उपस्कृताम्—अलंकृत; वैदूर्य—वैदूर्य मणियों से; वज्र—हीरा; अमल—खेदार क्वार्ट्ज (स्फटिक); नील—नीलमों; विद्रुमैः—तथा मूँगों से; मुक्ता—मोतियों; हरिद्भिः—तथा हरितमणि से; वलभीषु—घरों के दरवाजों पर; वेदिषु—स्तम्भयुक्त छज्जों पर; जुष्टेषु—खचित; जाल-आमुख—जालीदार खिड़कियों के; रन्ध्र—छेदों में; कुट्टिमेषु—तथा रत्नजड़ित फर्श पर; आविष्ट—बैठकर; पारावत—पालतू कबूतरों; बर्हि—तथा मोरों से; नादिताम्—प्रतिध्वनित; संसिक्त—जल से छिड़की हुई; रथ्या—राजसी गलियों; आपण—व्यापारिक मार्गों से; मार्ग—तथा अन्य सड़कों; चत्वराम्—तथा आँगन या चौतरा; प्रकीर्ण—बिखरे हुए; माल्य—फूल की मालाओं से; अङ्कुर—नवीन कोपलें; लाज—लावा; तण्डुलाम्—तथा चावल; आपूर्ण—पूर्ण; कुम्भैः—घड़ों से; दधि—दही से; चन्दन—तथा चन्दनलेप से; उक्षितैः—लेप किया; प्रसून—फूलों की पंखड़ियों से; दीप-आवलिभिः—दीपों की पंक्तियों से; स-पल्लवैः—पत्तियों सहित; स-वृन्द—फूलों के गुच्छों सहित; रम्भा—केला के तनों से; क्रमुकैः—तथा सुपाड़ी के वृक्ष के तनों

से; स-केतुभिः—झंडों से; सु-अलङ्कृत—सुन्दर सजाया हुआ; द्वार—द्वारों से युक्त; गृहाम्—घरों को; स-पट्टिकैः—पन्नियों से, झंडियों से।.

भगवान् ने देखा कि मथुरा के ऊँचे ऊँचे दरवाजे तथा घरों के प्रवेशद्वार स्फटिक के बने हैं, इसके विशाल तोरण तथा मुख्य द्वार सोने के हैं, इसके अन्न गोदाम तथा अन्य भण्डार ताँबे तथा पीतल के बने हैं और इसकी परिखा (खाईं) अप्रवेश्य है। मनोहर उद्यान तथा उपवन इस शहर की शोभा बढ़ा रहे थे। मुख्य चौराहे सोने से बनाये गये थे और इसकी इमारतों के साथ निजी विश्राम-उद्यान थे, साथ ही व्यापारिकों के सभाभवन तथा अन्य अनेक इमारतें थीं। मथुरा उन मोर तथा पालतू कबूतरों की बोलियों से गूँज रहा था, जो जालीदार खिड़कियों के छेदों पर, रत्नजटित फर्शों पर तथा ख भेदार छज्जों और घरों के सामने के सज्जित धरनों पर बैठे थे। ये छज्जे तथा धरने वैदूर्य मणियों, हीरों, स्फटिकों, नीलमों, मूँगों, मोतियों तथा हरित मणियों से सजाये गये थे। समस्त राजमार्गों तथा व्यापारिक गलियों में जल का छिड़काव हुआ था। इसी तरह पार्श्वगलियों तथा चबूतरों को भी सींचा गया था। सर्वत्र फूल मालाएँ, नव अंकुरित जौ, लावा तथा अक्षत बिखेरे हुए थे। घरों के दरवाजों के प्रवेशमार्ग पर जल से भरे सुसज्जित घड़े शोभा दे रहे थे जिन्हें आम की पत्तियों से अलंकृत किया गया था और दही तथा चन्दनलेप से पोता गया था। उनके चारों ओर फूल की पंखड़ियाँ तथा फीते लपेटे हुए थे। इन घड़ों के पास झंडियाँ, दीपों की पंक्ति, फूलों के गुच्छे, केलों के तथा सुपारी के वृक्षों के तने थे।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने अलंकृत घड़ों का विस्तृत वर्णन किया है—''प्रत्येक दरवाजे के दोनों ओर भूमि पर बिखेरे अक्षतों के ऊपर एक घड़ा है। हर घड़े के चारों ओर फूल की पंखड़ियाँ हैं, इसकी गर्दन पर फीते हैं तथा इसके मुँह पर आम तथा अन्य वृक्षों की पत्तियाँ रखी हैं। प्रत्येक घड़े के ऊपर एक सोने के थाल में दीपकों की पंक्तियाँ हैं। हर घड़े की बगल में केले का एक तना खड़ा है और सामने तथा पीछे भी सुपारी वृक्ष का एक-एक तना है। झंडियाँ इन घड़ों पर टिकी हैं।''

तां सम्प्रविष्टौ वसुदेवनन्दनौ
वृतौ वयस्यैर्नरदेववर्त्मना ।
द्रष्टुं समीयुस्त्वरिताः पुरस्त्रियो

हर्म्याणि चैवारुरुहुर्नृपोत्सुकाः ॥ २४॥

शब्दार्थ

ताम्—उस (मथुरा में); सम्प्रविष्टौ—घुसकर; वसुदेव—वसुदेव के; नन्दनौ—दोनों पुत्र; वृतौ—घिरे हुए; वयस्यैः—अपने तरुण मित्रों से; नर-देव—राजा की; वर्त्मना—सड़क से; द्रष्टुम्—देखने के लिए; समीयुः—निकल आईं; त्वरिताः—तेजी से; पुर—नगर की; स्त्रियः—स्त्रियाँ; हर्म्याणि—अपने अपने घरों पर; च—तथा; एव—भी; आरुरुहुः—ऊपर चढ़ गईं; नृप—हे राजा (परीक्षित); उत्सुकाः—उत्सुक।

मथुरा की स्त्रियाँ जल्दी-जल्दी एकत्र हुईं और ज्योंही वसुदेव के दोनों पुत्र अपने ग्वाल-बाल मित्रों से घिरे हुए राजमार्ग द्वारा नगर में प्रविष्ट हुए वे उन्हें देखने निकल आईं। हे राजन्, कुछ स्त्रियाँ उन्हें देखने की उत्सुकता से अपने घरों की छतों पर चढ़ गईं।

काश्चिद्विपर्यग्धृतवस्त्रभूषणा
विस्मृत्य चैकं युगलेष्वथापराः ।
कृतैकपत्रश्रवनैकनूपुरा
नाङ्क्त्वा द्वितीयं त्वपराश्च लोचनम् ॥ २५॥

शब्दार्थ

कश्चित्—उनमें से कुछ; विपर्यक्—उल्टा; धृत—पहन कर; वस्त्र—अपने वस्त्र; भूषणः—तथा गहने; विस्मृत्य—भूल कर; च—तथा; एकम्—एक; युगलेषु—जोड़ी की; अथ—तथा; अपराः—अन्य; कृत—धारण करके; एक—केवल एक; पत्र—कुंडल; श्रवण—कान में; एक—या एक; नूपुराः—नूपुरों की जोड़ी; न अङ्क्त्वा—बिना आँजे; द्वितीयम्—दूसरी; तु—लेकिन; अपराः—अन्य स्त्रियाँ; च—तथा; लोचनम्—एक आँख।

कुछ स्त्रियों ने अपने वस्त्र तथा गहने उल्टे पहन लिये, कुछ अपना एक कुंडल या पायल पहनना भूल गईं और अन्यों ने केवल एक आँख में अंजन लगाया, दूसरी में लगा ही न पाईं।

तात्पर्य : स्त्रियाँ कृष्ण का दर्शन पाने के लिए अत्यन्त उत्सुक थीं और वे हड़बड़ी तथा उत्तेजनावश अपने आपको भूल गईं।

अश्नन्त्य एकास्तदपास्य सोत्सवा
अभ्यज्यमाना अकृतोपमज्जनाः ।
स्वपन्त्य उत्थाय निशम्य निःस्वनं
प्रपाययन्त्योऽर्भमपोह्य मातरः ॥ २६॥

शब्दार्थ

अश्नन्त्यः—भोजन कर रहीं; एकः—कुछ; तत्—उसे; अपास्य—छोड़कर; स-उत्सवः—हर्षपूर्वक; अभ्यज्यमानाः—मालिश की जाती; अकृत—बिना पूरा किये; उपमज्जनाः—अपना स्नान करना; स्वपन्त्यः—सोती हुईं; उत्थाय—उठकर; निशम्य—सुनकर; निःस्वनम्—तेज आवाजें; प्रपाययन्त्यः—दूध पिलाती; अर्भम्—अपने बच्चे को; अपोह्य—एक तरफ रखकर; मातरः—माताएँ।

जो भोजन कर रही थीं उन्होंने भोजन करना छोड़ दिया, अन्य स्त्रियाँ अधनहाई या उबटन

पूरी तरह लगाये बिना ही चली आईं। जो स्त्रियाँ सो रही थीं वे शोर सुनकर तुरन्त उठ गईं और माताओं ने दूध पीते बच्चों को अपनी गोदों से उतारकर अलग रख दिया।

मनांसि तासामरविन्दलोचनः
प्रगल्भलीलाहसितावलोकैः ।
जहार मत्तद्विरदेन्द्रविक्रमो
दृशां ददच्छ्रीरमणात्मनोत्सवम् ॥ २७॥

शब्दार्थ

मनांसि—मन; तासाम्—उनके; अरविन्द—कमल जैसे; लोचनः—आँखें; प्रगल्भ—उद्धत; लीला—अपनी लीलाएँ; हसित—हँसते हुए; अवलोकैः—चितवनों से; जहार—हर लिया; मत्त—मतवाली; द्विरद-इन्द्र—शाही हाथी (जैसी); विक्रमः—चाल; दृशाम्—उनकी आँखों के लिए; ददत्—देते हुए; श्री—लक्ष्मी की; रमण—आनन्द स्त्रोत; आत्मना—अपने शरीर से; उत्सवम्—उत्सव।

अपनी साहसिक लीलाओं का स्मरण करके मुसकाते हुए कमल-नेत्रों वाले भगवान् ने अपनी चितवनों से स्त्रियों के मनों को मोह लिया। वे शाही हाथी की तरह मतवाली चाल से अपने दिव्य शरीर से उन स्त्रियों के नेत्रों के लिए उत्सव उत्पन्न करते हुए चल रहे थे। उनका यह शरीर दिव्य देवी लक्ष्मी के लिए आनन्द का स्त्रोत है।

दृष्ट्वा मुहुः श्रुतमनुद्रुतचेतसस्तं
तत्प्रेक्षणोत्स्मितसुधोक्षणलब्धमानाः ।
आनन्दमूर्तिमुपगुह्य दृशात्मलब्धं
हृष्यत्त्वचो जहुरनन्तमरिन्दमाधिम् ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

दृष्ट्वा—देखकर; मुहुः—बारम्बार; श्रुतम्—सुना गया; अनुद्रुत—पिघले हुए; चेतसः—हृदय; तम्—उसको; तत्—उसकी; प्रेक्षण—चितवनों के; उत्-स्मित—तथा अट्टहास; सुधा—अमृत; उक्षण—छिड़कने से; लब्ध—प्राप्त करके; मानाः—सम्मान; आनन्द—आनन्द की; मूर्तिम्—साकार रूप को; उपगुह्य—आलिंगन करके; दृशा—आँखों से होकर; आत्म—अपने भीतर; लब्धम्—प्राप्त किया गया; हृष्यत्—फूटकर; त्वचः—उनकी चमड़ी; जहुः—त्याग दिया; अनन्तम्—असीम; अरिम्-दम—हे शत्रुओं के दमनकर्ता (परीक्षित); आधिम्—मानसिक क्लेश।

मथुरा की स्त्रियों ने कृष्ण के विषय में बारम्बार सुन रखा था अतः उनका दर्शन पाते ही उनके हृदय द्रवित हो उठे। वे अपने को सम्मानित अनुभव कर रही थीं कि कृष्ण ने उन पर अपनी चितवन तथा हँसी रूपी अमृत का छिड़काव किया है। अपने नेत्रों के द्वारा उन्हें अपने हृदयों में ग्रहण करके उन सबों ने समस्त आनन्द की मूर्ति का आलिंगन किया और हे अरिन्दम! ज्योंही उन्हें रोमांच हो आया वे उनकी अनुपस्थिति से जन्य असीम कष्ट को भूल गईं।

प्रासादशिखरारूढाः प्रीत्युत्फुल्लमुखाम्बुजाः ।
अभ्यवर्षन्सौमनस्यैः प्रमदा बलकेशवौ ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

प्रासाद—महलों की; शिखर—छतों पर; आरूढाः—चढ़कर; प्रीति—स्नेह से; उत्फुल्ल—खिले हुए; मुख—मुँह; अम्बुजाः—जो कमलों जैसे थे; अभ्यवर्षन्—वर्षा की; सौमनस्यैः—फूलों से; प्रमदाः—सुन्दर स्त्रियों ने; बल-केशवौ—बलराम तथा कृष्ण पर।

स्नेह से प्रफुल्लित कमल सदृश मुखों वाली स्त्रियों ने जो अपने महलों की छतों पर चढ़ी हुई थीं, भगवान् बलराम तथा भगवान् कृष्ण पर फूलों की वर्षा की।

दध्यक्षतैः सोदपात्रैः स्रग्गन्धैरभ्युपायनैः ।
तावानर्चुः प्रमुदितास्तत्र तत्र द्विजातयः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

दधि—दही; अक्षतैः—तथा अखण्डित जौ के बीजों से; स—तथा; उद-पात्रैः—जल से पूरित घड़ों से; स्रक्—मालाओं; गन्धैः—तथा सुगन्धित द्रव्यों से; अभ्युपायनैः—पूजा की अन्य सामग्री से; तौ—दोनों ने; आनर्चुः—पूजा की; प्रमुदिताः—प्रसन्नचित्त; तत्र तत्र—विभिन्न स्थानों पर; द्वि-जातयः—ब्राह्मणों ने।

रास्ते के किनारे खड़े ब्राह्मणों ने दही, अक्षत (जौ), जल-भरे कलशों, फूल-मालाओं, सुगन्धित द्रव्यों यथा चन्दन के लेप तथा पूजा की अन्य वस्तुओं की भेंटों से दोनों भाइयों का सम्मान किया।

ऊचुः पौरा अहो गोप्यस्तपः किमचरन्महत् ।
या ह्येतावनुपश्यन्ति नरलोकमहोत्सवौ ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

ऊचुः—कहा; पौराः—नगर की स्त्रियों ने; अहो—हाय; गोप्यः—(वृन्दावन की) गोपियों ने; तपः—तपस्या; किम्—कौन-सी; अचरन्—की है; महत्—महान; याः—जो; हि—निस्सन्देह; एतौ—इन दोनों को; अनुपश्यन्ति—निरन्तर देखती हैं; नर-लोक—मानव-समाज के लिए; महा-उत्सवौ—आनन्द के महान् स्रोत हैं।

मथुरा की स्त्रियाँ चिल्ला पड़ीं: अहा! समस्त मानव-जाति को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने वाले कृष्ण तथा बलराम को निरन्तर देखते रहने के लिए गोपियों ने कौन-सी कठोर तपस्याएँ की होंगी?

रजकं कञ्चिदायान्तं रङ्गकारं गदाग्रजः ।
दृष्ट्वायाचत वासांसि धौतान्यत्युत्तमानि च ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

रजकम्—धोबी को; कञ्चित्—किसी; आयान्तम्—आते हुए; रङ्ग-कारम्—रँगाई करने वाले को; गद-अग्रजः—गद के बड़े भाई कृष्ण ने; दृष्ट्वा—देखकर; अयाचत—याचना की; वासांसि—वस्त्रों की; धौतानि—धुले; अति-उत्तमानि—अत्युत्तम; च—तथा।

कपड़ा रँगने वाले एक धोबी को अपनी ओर आते देखकर कृष्ण ने उससे उत्तमोत्तम धुले वस्त्र माँगे।

देह्यावयोः समुचितान्यङ्ग वासांसि चार्हतोः ।
भविष्यति परं श्रेयो दातुस्ते नात्र संशयः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

देहि—दो; आवयोः—हम दोनों को; समुचितानि—उपयुक्त; अङ्ग—हे प्रिय; वासांसि—वस्त्र; च—तथा; अर्हतोः—दोनों सुपात्रों को; भविष्यति—होगा; परम्—अत्यन्त; श्रेयः—लाभ; दातुः—दाता के लिए; ते—तुम; न—नहीं है; अत्र—इसमें; संशयः—सन्देह।

[भगवान् कृष्ण ने कहा] : कृपया हम दोनों को उपयुक्त वस्त्र दे दीजिये क्योंकि हम इनके योग्य हैं। यदि आप यह दान देंगे तो इसमें सन्देह नहीं कि आपको सबसे बड़ा लाभ प्राप्त होगा।

स याचितो भगवता परिपूर्णेन सर्वतः ।
साक्षेपं रुषितः प्राह भृत्यो राज्ञः सुदुर्मदः ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

सः—वह; याचितः—याचना किया गया; भगवता—भगवान् द्वारा; परिपूर्णेन—परम पूर्ण; सर्वतः—सभी प्रकार से; स-आक्षेपम्—अपमान करते हुए; रुषितः—क्रुद्ध; प्राह—बोला; भृत्यः—नौकर; राज्ञः—राजा का; सु—अत्यधिक; दुर्मदः—घमंडी।

सभी प्रकार से परिपूर्ण भगवान् द्वारा इस प्रकार याचना किये जाने पर राजा का वह घमंडी नौकर क्रुद्ध हो उठा और अपमान-भरे वचनों में बोला।

ईदृशान्येव वासांसी नित्यं गिरिवनेचरः ।
परिधत्त किमुद्वृत्ता राजद्रव्याण्यभीप्सथ ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

ईदृशानि—इस तरह के; एव—निस्सन्देह; वासांसि—वस्त्र; नित्यम्—सदैव; गिरि—पर्वतों पर; वने—तथा जंगलों में; चराः—विचरण करने वाले; परिधत्त—पहनेंगे; किम्—क्या; उद्वृत्ताः—उद्दंड; राज—राजा की; द्रव्याणि—वस्तुएँ; अभीप्सथ—तुम चाहते हो।

[धोबी ने कहा] : अरे उद्दंड बालको! तुम पर्वतों तथा जंगलों में घूमने के आदी हो फिर भी तुम इस तरह के वस्त्रों को पहनने का साहस कर रहे हो। तुम जिन्हें माँग रहे हो वे राजा की सम्पत्ति हैं।

याताशु बालिशा मैवं प्रार्थ्यं यदि जिजीवीषा ।
बध्नन्ति घ्नन्ति लुम्पन्ति दृप्तं राजकुलानि वै ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

यात—जाओ; आशु—शीघ्र; बालिशः—मूर्खो; मा—मत; एवम्—इस तरह; प्रार्थ्यम्—माँगो; यदि—यदि; जिजीविषा—जीवित रहना चाहते हो; बध्नन्ति—बाँध देते हैं; घ्नन्ति—मार डालते हैं; लुम्पन्ति—लूट लेते हैं; दृप्तम्—उच्छृंखल; राज-कुलानि—राजा के लोग; वै—निस्सन्देह।

मूर्खो, यहाँ से तुरन्त निकल जाओ। यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो इस तरह मत माँगो। जब कोई अत्यधिक उच्छृंखल हो जाता है, तो राजा के कर्मचारी उसे बन्दी बना लेते हैं और जान से मार डालते हैं। और उसकी सारी सम्पत्ति छीन लेते हैं।

एवं विकत्थमानस्य कुपितो देवकीसुतः ।
रजकस्य कराग्रेण शिरः कायादपातयत् ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; विकत्थमानस्य—इस तरह बहककर बोलने वाले; कुपितः—क्रुद्ध; देवकी-सुतः—देवकी-पुत्र, कृष्ण ने; रजकस्य—धोबी का; कर—एक हाथ के; अग्रेण—अगले भाग से; शिरः—सिर; कायात्—शरीर से; अपातयत्—गिरा दिया।

जब वह धोबी इस तरह बहकी बातें बोला तो देवकी-पुत्र क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने अपनी अँगुलियों के अगले भाग से ही उसके शरीर से उसका सिर अलग कर दिया।

तस्यानुजीविनः सर्वे वासःकोशान्विसृज्य वै ।
दुद्रुवुः सर्वतो मार्गं वासांसि जगृहेऽच्युतः ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसके; अनुजीविनः—कर्मचारी; सर्वे—सभी; वासः—वस्त्रों के; कोशान्—गट्ठरों को; विसृज्य—छोड़कर; वै—निश्चय ही; दद्रुवुः—भाग गये; सर्वतः—चारों ओर; मार्गम्—रास्ते में; वासांसि—वस्त्र; जगृहे—ले लिया; अच्युतः—भगवान् कृष्ण ने।

धोबी के नौकरों ने अपने अपने वस्त्रों के गट्ठर गिरा दिये और मार्ग से भागकर चारों ओर तितर-बितर हो गये। तब भगवान् कृष्ण ने उन वस्त्रों को ले लिया।

वसित्वात्मप्रिये वस्त्रे कृष्णः सङ्कर्षणस्तथा ।
शेषाण्यादत्त गोपेभ्यो विसृज्य भुवि कानिचित् ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

वसित्वा—वस्त्र पहनकर; आत्म-प्रिये—अपनी इच्छानुसार; वस्त्रे—वस्त्रों की जोड़ी में; कृष्णः—कृष्ण; सङ्कर्षणः—बलराम; तथा—भी; शेषाणि—शेष; आदत्त—दे दिया; गोपेभ्यः—ग्वालबालों को; विसृज्य—फेंकते हुए; भुवि—भूमि पर; कानिचित्—अनेक।

कृष्ण तथा बलराम ने अपनी मनपसंद के वस्त्रों की जोड़ी पहन ली और तब कृष्ण ने शेष वस्त्रों को ग्वालबालों में वितरित करते हुए कुछ को भूमि पर बिखेर दिया।

ततस्तु वायकः प्रीतस्तयोर्वेषमकल्पयत् ।
विचित्रवर्णैश्चैलेयैराकल्पैरनुरूपतः ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; तु—और भी; वायकः—बुनकर (दर्जी) ने; प्रीतः—स्नेहवान्; तयोः—दोनों के लिए; वेषम्—पोशाक; अकल्पयत्—व्यवस्था की; विचित्र—विविध; वर्णैः—रंगों से; चैलेयैः—वस्त्र से बने; आकल्पैः—गहनों से; अनुरूपतः—उपयुक्त।

तत्पश्चात् एक बुनकर आया और दोनों विभूतियों के प्रति स्नेह से वशीभूत होकर विविध रंगों वाले वस्त्र-आभूषणों से उनकी पोशाकें सजा दीं।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी बतलाते हैं कि उस बुनकर ने दोनों भाइयों को वस्त्र के कंगनों तथा कुण्डलों से सजाया जो मणियों की तरह लग रहे थे। *अनुरूपतः* शब्द सूचित करता है कि रंगों का सुन्दर मेल था।

नानालक्षणवेषाभ्यां कृष्णरामौ विरेजतुः ।
स्वलङ्कृतौ बालगजौ पर्वणीव सितेतरौ ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

नाना—विविध; लक्षण—उत्तम गुणों से युक्त; वेषाभ्याम्—अपने अपने वस्त्रों से; कृष्ण-रामौ—कृष्ण तथा बलराम; विरेजतुः—भव्य लग रहे थे; सु-अलङ्कृतौ—अच्छी तरह से आभूषित; बाल—बच्चा; गजौ—हाथी; पर्वणि—उत्सव में; इव—मानो; सित—श्वेत; इतरौ—तथा उसके विपरीत (श्याम)।

कृष्ण तथा बलराम अपनी अपनी अद्भुत रीति से सजाई गई विशिष्ट पोशाक में शोभायमान दिखने लगे। वे उत्सव के समय सजाये गये श्वेत तथा श्याम हाथी के बच्चों की जोड़ी के समान लग रहे थे।

तस्य प्रसन्नो भगवान्प्रादात्सारूप्यमात्मनः ।
श्रियं च परमां लोके बलैश्वर्यस्मृतीन्द्रियम् ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उससे; प्रसन्नः—तुष्ट; भगवान्—भगवान् ने; प्रादात्—प्रदान किया; सारूप्यम्—उसी रूप से युक्त मुक्ति; आत्मनः—जैसाकि अपना था; श्रियम्—ऐश्वर्य; च—तथा; परमाम्—परम; लोके—इस जगत में; बल—शारीरिक बल; ऐश्वर्य—प्रभाव; स्मृति—स्मरणशक्ति; इन्द्रियम्—इन्द्रिय दक्षता।

उस बुनकर से प्रसन्न होकर भगवान् कृष्ण ने उसे आशीर्वाद दिया कि वह मृत्यु के बाद भगवान् जैसा स्वरूप प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करे और जब तक इस लोक में रहे तब तक वह परम ऐश्वर्य, शारीरिक बल, प्रभाव, स्मृति तथा एन्द्रिय शक्ति का भोग करे।

ततः सुदाम्नो भवनं मालाकारस्य जग्मतुः ।
तौ दृष्ट्वा स समुत्थाय ननाम शिरसा भुवि ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

ततः—तत्पश्चात्; सुदाम्नः—सुदामा के; भवनम्—घर; माला-कारस्य—माली के; जग्मतुः—दोनों गये; तौ—उन दोनों को; दृष्ट्वा—देखकर; सः—उसने; समुत्थाय—उठकर; ननाम—नमस्कार किया; शिरसा—सिर के बल; भुवि—भूमि पर।

तत्पश्चात् दोनों भाई सुदामा माली के घर गये। जब सुदामा ने उन्हें देखा तो वह तुरन्त खड़ा हो गया और भूमि पर मस्तक नवाकर उसने उन्हें प्रणाम किया।

तयोरासनमानीय पाद्यं चार्घ्यार्हणादिभिः ।
पूजां सानुगयोश्चक्रे स्रक्ताम्बूलानुलेपनैः ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ

तयोः—उन दोनों के लिए; आसनम्—आसन; आनीय—जाकर; पाद्यम्—पाँव धोने के लिये जल; च—तथा; अर्घ्य—हाथ धोने के लिए पानी; अर्हण—भेंट; आदिभिः—इत्यादि से युक्त; पूजाम्—पूजा; स-अनुगयोः—दोनों की, उनके संगियों समेत; चक्रे—सम्पन्न की; स्रक्—मालाओं से; ताम्बूल—पान से; अनुलेपनैः—तथा चन्दन-लेप से।

उन्हें आसन प्रदान करके तथा उनके पाँव परवारकर सुदामा ने उनकी तथा उनके साथियों की अर्घ्य, माला, पान, चन्दन-लेप तथा अन्य उपहारों के साथ पूजा की।

प्राह नः सार्थकं जन्म पावितं च कुलं प्रभो ।
पितृदेवर्षयो मह्यं तुष्टा ह्यागमनेन वाम् ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ

प्राह—उसने कहा; नः—हमारा; स-अर्थकम्—सफल; जन्म—जन्म; पावितम्—पवित्र किया गया; च—तथा; कुलम्—परिवार; प्रभो—हे प्रभु; पितृ—मेरे पितरगण; देव—देवतागण; ऋषयः—तथा ऋषिगण; मह्यम्—मुझसे; तुष्टाः—प्रसन्न हैं; हि—निस्सन्देह; आगमनेन—आगमन से; वाम्—तुम दोनों के।

[सुदामा ने कहा]: हे प्रभु, अब मेरा जन्म पवित्र हो गया और मेरा परिवार निष्कलुष हो गया। चूँकि अब आप दोनों मेरे यहाँ आये हैं अतः मेरे पितर, देवता तथा ऋषिगण सभी मुझसे निश्चय ही संतुष्ट हुये हैं।

भवन्तौ किल विश्वस्य जगतः कारणं परम् ।
अवतीर्णाविहांशेन क्षेमाय च भवाय च ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ

भवन्तौ—आप दोनों; किल—निस्सन्देह; विश्वस्य—सम्पूर्ण; जगतः—ब्रह्माण्ड के; कारणम्—कारण; परम्—चरम; अवतीर्णौ—अवतरित होकर; इह—यहाँ; अंशेन—अपने अंशों समेत; क्षेमाय—लाभ के लिए; च—तथा; भवाय—समृद्धि के लिए; च—भी।

आप दोनों भगवान् इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के परम कारण हैं। इस जगत को भरण-पोषण तथा समृद्धि प्रदान करने के लिए आप अपने अंशों समेत अवतरित हुए हैं।

न हि वां विषमा दृष्टिः सुहृदोर्जगदात्मनोः ।
समयोः सर्वभूतेषु भजन्तं भजतोरपि ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं है; हि—निस्सन्देह; वाम्—तुम दोनों को; विषमा—पक्षपातपूर्ण; दृष्टिः—दृष्टि; सुहृदोः—शुभचिन्तक मित्र; जगत्—ब्रह्माण्ड का; आत्मनोः—आत्मा; समयोः—समान; सर्व—सभी; भूतेषु—जीवों के प्रति; भजन्तम्—आपकी पूजा करने वाले; भजतोः—पूजा करते हुए; अपि—भी।

चूँकि आप शुभचिन्तक मित्र तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के परमात्मा हैं अतः आप सबों को निष्पक्ष दृष्टि से देखते हैं। अतः यद्यपि आप अपने भक्तों से प्रेमपूर्ण पूजा का आदान-प्रदान करते हैं फिर भी आप सभी प्राणियों पर सदा समभाव रखते हैं।

तावज्ञापयतं भृत्यं किमहं करवाणि वाम् ।
पुंसोऽत्यनुग्रहो ह्येष भवद्भिर्यन्नियुज्यते ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ

तौ—वे दोनों; आज्ञापयतम्—आज्ञा दें; भृत्यम्—अपने सेवक को; किम्—क्या; अहम्—मैं; करवाणि—करूँ; वाम्—तुम दोनों को; पुंसः—किसी पुरुष के लिए; अति—अत्यधिक; अनुग्रहः—कृपा; हि—निस्सन्देह; एषः—यह; भवद्भिः—आपके द्वारा; यत्—जिसमें; नियुज्यते—उसे लगाया जाता है।

कृपया इस अपने दास को आप जो चाहते हों वह करने का आदेश दें। आपके द्वारा किसी सेवा में लगाया जाना किसी के लिए भी महान् वरदान है।

इत्यभिप्रेत्य राजेन्द्र सुदामा प्रीतमानसः ।
शस्तैः सुगन्धैः कुसुमैर्माला विरचिता ददौ ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार बोलते हुए; अभिप्रेत्य—उनके अभिप्राय को समझकर; राज-इन्द्र—हे राजाओं में श्रेष्ठ (परीक्षित); सुदामा—सुदामा; प्रीत-मानसः—हृदय में प्रसन्न; शस्तैः—ताजे; सु-गन्धैः—तथा सुगन्धित; कुसुमैः—फूलों से; मलः—मालाएँ; विरचिताः—बनाई गईं; ददौ—दिया।.

[शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा] : हे राजाओं में श्रेष्ठ, ये शब्द कहकर सुदामा ने यह जान लिया कि कृष्ण तथा बलराम क्या चाह रहे थे। इस तरह उसने अतीव प्रसन्नतापूर्वक उन्हें ताजे सुगन्धित फूलों की मालाएँ अर्पित कीं।

ताभिः स्वलङ्कृतौ प्रीतौ कृष्णरामौ सहानुगौ ।
प्रणताय प्रपन्नाय ददतुर्वरदौ वरान् ॥ ५० ॥

शब्दार्थ

ताभिः—उन (मालाओं) से; सु-अलङ्कृतौ—सुन्दर ढंग से सजकर; प्रीतौ—तुष्ट; कृष्ण-रामौ—कृष्ण तथा बलराम; सह—साथ; अनुगौ—अपने संगियों के; प्रणताय—नतमस्तक; प्रपन्नाय—शरणागत (सुदामा) को; ददतुः—दिया; वरदौ—वरदान देने वाले दोनों ने; वरान्—इच्छित वरों को।.

इन मालाओं से सुसज्जित होकर कृष्ण तथा बलराम अतीव प्रसन्न हुए और उसी तरह उनके संगी भी। तब दोनों विभूतियों ने अपने समक्ष विनत शरणागत सुदामा को उसके मनवांछित वर प्रदान किये।

सोऽपि वव्रेऽचलां भक्तिं तस्मिन्नेवाखिलात्मनि ।
तद्भक्तेषु च सौहार्दं भूतेषु च दयां पराम् ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ

सः—उसने; अपि—तथा; वव्रे—चुना; अचलाम्—अचल; भक्तिम्—भक्ति; तस्मिन्—उन; एव—एकमात्र; अखिल—हरएक के; आत्मनि—परमात्मा के प्रति; तत्—उसके; भक्तेषु—भक्तों के प्रति; च—तथा; सौहार्दम्—मैत्री; भूतेषु—सामान्य जीवों के प्रति; च—तथा; दयाम्—दया; पराम्—दिव्य।.

सुदामा ने समस्त जगत के परमात्मा कृष्ण की अचल भक्ति, उनके भक्तों के साथ मित्रता तथा समस्त जीवों के प्रति दिव्य दया को चुना।

इति तस्मै वरं दत्त्वा श्रियं चान्वयवर्धिनीम् ।
बलमायुर्यशः कान्तिं निर्जगाम सहाग्रजः ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; तस्मै—उसको; वरम्—वर; दत्त्वा—देकर; श्रियम्—ऐश्वर्य; च—तथा; अन्वय—उसका परिवार; वर्धिनीम्—वृद्धि करते हुए; बलम्—बलम; आयुः—दीर्घ-आयु; यशः—यश; कान्तिम्—सौन्दर्य; निर्जगाम—चले गये; सह—साथ; अग्र-जः—अपने बड़े भाई बलराम के।.

भगवान् कृष्ण ने सुदामा को न केवल ये वर दिये अपितु उन्होंने उसे बल, दीर्घायु, यश,

कान्ति तथा उसके परिवार की सतत बुद्धिमान हुई समृद्धि भी प्रदान की। तत्पश्चात् कृष्ण तथा उनके बड़े भाई ने उससे विदा ली।

तात्पर्य : हम यहाँ पर दुष्ट धोबी तथा भक्त माली सुदामा के साथ भगवान् कृष्ण के व्यवहारों का स्पष्ट अन्तर पाते हैं। भगवान् अपने विरोधियों के लिए वज्र के समान कठोर हैं और शरणागतों के लिए गुलाब के समान कोमल। इसलिए हमें निष्ठापूर्वक भगवान् कृष्ण की शरण में जाना चाहिए क्योंकि यही हमारे हित में है।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''कृष्ण तथा बलराम का मथुरा में प्रवेश'' नामक एकतालीसवें अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।